REGD. NO. L. 2077

भक्ति

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

भगवद्भक्ति विमुखानां शास्त्र गर्तेषु मुह्यताम् ।
न मार्गं न च मोक्षः स्याद् तेषां जन्म शतैरपि ॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

सम्पादक—स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती तथा भूमानन्द ब्रह्मचारी ।

पौष सम्वत् १९८३ ॥

भक्ति के नियम।

१. भगवान् की भक्ति का प्रचार करना गो रक्षण और उस के लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना। वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना। सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना। राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. वार्षिक चन्दा सर्वसाधारण से २) होगा।

४. जो महानुभाव २५) रुपया देंगे वह पत्र के संरक्षक और ५) देने वाले सहायक होंगे।

५. अश्लील और अपरिचित विज्ञापन नहीं लिए जावेंगे।

६. लेखों को प्रकाशित करना और और घटाना व बढ़ाना सर्वथा सम्पादक के अधिकार में होगा।

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नाम से और विज्ञापन व प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्ति के नाम से होना चाहिए।

विषय सूची।

	विषय	पृष्ठ
१.	मंगलाचरणम्	१
२.	भक्ति।	१
	ले० भूमानन्द ब्रह्मचारी	
३.	धर्मोपदेश।	३
	ले० मुन्शी रूपराम जी	
४.	भक्ति और प्रेम	११
	ले० श्री 'कुबेर' रागीश	
५.	हिन्दू लड़कियों के साथ कपट और छल	१३
	ले० भगतराम छावनी फिरोजपुर	
६.	भजन	१५
७.	निष्काम कर्म	१७
	ले० भूमानन्द ब्रह्मचारी	
८.	मेरा	१९
	ले० स्वा० कृष्णानन्द	
९.	भजन	२१
१०.	सत्य	२३
११.	धर्म	२४
१२.	सत्संग महात्म्य	२६
	ले० स्वा० स्वरूपानन्द सरस्वती	
१३.	एक पुरानी कथा (सम्पादक)	२९
१४.	समाचार समालोचना	

ॐ

"कलौतु केवला भक्तिः"।

वार्षिक चन्दा ३) एक प्रति का ।)

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जागृत करने वाली मासिक पत्रिका।

वर्ष १ } भगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा, पौष पूर्णिमा सं० १९८३। { अङ्क ४

॥ मंगलाचरणम् ॥

ओंकारं निगमान्त वेद्य मनिशं वेदान्त तत्वास्पदम्।
सम्भूतिस्थितिनाशहेतुममलं विश्वस्य विश्वात्मकम्॥
विश्वत्राण परायणं श्रुति शत सम्पोच्यमानं प्रभुं।
सत्यंज्ञानमनन्त मूर्ति मचलं सत्यं परं धीमहि॥ १॥

निरन्तर शास्त्र संवेद्य वेदान्त तत्व स्वरूप, विश्व के उत्पत्ति स्थिति और नाश के कारण, संसार के त्राण में परायण, असंख्य श्रुतियों से गायमान विश्व स्वरूप सत्य ज्ञान आनन्द मूर्ति अविनाशी ओंकार स्वरूप पर ब्रह्म का हम ध्यान करते हैं॥ १॥

यः पूज्यो यतिभिः स्वधर्म निरतैर्ध्यायन्ति यं योगिनो ।
येनात्तं निगमान्त वेद्य मनिशं यस्मै हविर्दीयते ॥
यस्मात्स्थावर जंगमं समभवद्यस्यांशमात्रोवरो ।
यस्मिंल्लीनमिदं प्रणौमि सततं तं वासुदेवं गुरुम् ॥ २ ॥

जो अपने धर्म में लगे हुये यतियों से पूज्य जिस का योगी जन ध्यान करते हैं, जिस ने सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्व को जाना है, और जिस के लिये होता प्रतिदिन हवि प्रदान करते हैं जिस के अंश मात्र से स्थावर जंगमादि उत्पन्न हुये हैं, और जिस में यह सब जगत् लीन होता है, उस वासुदेव भगवान् को हम प्रणाम करते हैं ॥ २ ॥

शंखं चक्रगदेषु चापपरिघाञ्छूलं भुशंडीं शिरः ।
शखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषा वृताम् ॥
नीलाश्मद्युतिमास्य पाद दशकां सेवेमहाकालिकां ।
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥ ३ ॥

हाथों में शंख चक्र गदा धनु परिघ शूल भुशुण्डी आदि शस्त्रों को धारण करने वाली और नील मणि के समान देदीप्यमान मुखारविन्द मधुकैटभ के विनाशार्थ कमलज से स्तूयमान सर्व भूषणोंसे आवृत्त त्रिनयन महाकाली की हम सेवा करते हैं ॥ ३ ॥

मातङ्गी भुवनेश्वरी च बगला धूमावती भैरवी ।
ताराच्छिन्न शिरोधरे भगवती श्यामारमा सुन्दरी ॥
दातुं न प्रभवन्ति वाञ्छित फलं यस्य प्रसादं विना ।
तं वन्दे शिव रूपिणं निज गुरुं सर्वार्थ सिद्धिप्रदम् ॥ ४ ॥

गगन मण्डल मण्डित श्यामा, रमा, मातंगी, भुवनेश्वरी, बगला, धूमावती भैरवी, तारा, सुन्दरी, भगवती, जिस की प्रसन्नता के बिना अभिष्ट फल देने में असमर्थ हैं, ऐसे सर्वार्थ सिद्धि

प्रद शिव रूपी निज गुरु को प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

काशी द्वारवती प्रयाग मथुरा योध्यागयावन्तिका ।
मायापुष्कर काञ्चिकोत्कलगिरि श्रीशैलविन्ध्यादयः ॥
नैते तारयितुं भवन्ति कुशला यस्य प्रसादं विना ।
तं वन्दे शिव रूपिणं निज कुरुं सर्वार्थ सिद्धिप्रदम् ॥ ५ ॥

काशी, द्वारवती, प्रयाग, मथुरा, अयोध्या, गया, अवन्तिका, माया, पुष्कर, काञ्चिका, उत्कलगिरि, श्री शैल विंध्याचलादि, जिस के प्रसाद बिना तारने को समर्थ नहीं हैं, ऐसे सर्वार्थ सद्धि प्रद शिवरूपी निज गुरु को प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

चूडोत्तंसितचारु चन्द्र कलिका चञ्चच्छिखा भास्वरो ।
लीलादग्ध विलोल कामशलभः श्रेयोदशाग्रे स्फुरन ॥
अन्तः स्फूर्जदपार मोहतिमिर प्राग्भारमुच्चाटयन् ।
चेतः सद्मनि योगिनो विजयते ज्ञान प्रदीपो हरः ॥ ६ ॥

जिन की जटा में चंचल और देदीप्यमान चन्द्रकला विराज मान है, और लीला से जिन्हों ने कामदेव रूपी पतंग को भस्म किया है, आगे कल्याण की स्फूर्ती करते हुए, और पूर्व में अपार मोह रूपी तिमिर को उच्चाटन करते हुए, योगीज नों के हृदय में सर्वोत्कृष्टता से प्रदीप्त रूप विराजमान हैं उनको नमस्कार है ॥ ६ ॥

मेघैर्मेदुरमंबरं वनभुवः श्यामास्तमालद्रुमैः ।
नक्तं भीरुरयं त्वमेव तदिमं राधेगृहं प्रापय ॥
इत्थं नन्दनिदेशतश्चलितयोः प्रत्यध्वकुंजद्रुमं ।
राधामाधवयोर्जयन्ति यमुनाकूले रहः केलयः ॥ ७ ॥

आकाश मेघों से व्याप्त हो रहा है और बन भूमि तमाल वृक्षों से श्याम होरही है और ये

श्रीकृष्ण चन्द्र रात्रि में भीरु (डरपोक) हैं इस से हे राधे ! तूही इनको घर पहुंचा दे इस प्रकार नन्द की आज्ञा से मार्ग की कुंजों के वृक्षों में गमन करते हुए जो राधा और श्री कृष्णचन्द्र हैं उन की यमुना के कूल में जो एकान्त क्रीड़ा है वे सब भक्त जनों की जय करें ॥ ७ ॥

यं शैवा समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो ।
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाण पटवः कर्त्तेतिनैयायिकाः ॥
अर्हन्नित्यथ जैन शासनरताः कर्त्तेति मीमांसकाः ।
सोयं नो विदधातु वांछित फलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥ ८ ॥

जिन को शैव शिव, वेदान्ती ब्रह्म, प्रमाण पटु बौद्ध बुद्ध, नैयायिक कर्ता, जैनमतावलम्बी अर्हन्, मीमांसिक कर्म इन नामों से उपासना करते हैं ऐसे त्रिलोकी के नाथहरि हमको मन वन्छित फल दें ॥ ८ ॥

पृथिवी तावदियं महत्सुमहती तद्वेष्टनं वारिधिः ।
स पीतः कलशोद्भवेन मुनिना स व्योम्नि खद्योतवत् ॥
आकाशोपि दशाननेन तुलितः बद्धोप्यसौ वालिना ।
बाली राघव रामचन्द्र निहतो रामः सतां मानसे ॥
तस्माद्राम परायणोहि भवतां कोन्योस्ति तुल्यो महान् ॥ ९ ॥

यह पृथ्वि जो बहुत बड़ी है इस का वेष्टन समुद्र है समुद्र को अगस्त्य ने पान किया अरु आकाश में तारा होकर चमकता है और आकाश रावण ने तुलित कर दिया और रावण भी वाली से बांधा गया और वाली रामचन्द्र से मारा गया वह राम सज्जनों के हृदय में निवास करते हैं उनकी भक्ति में परायण जनों के तुल्य कौन होसकता है ॥ ॥ ९ ॥

कस्तूरी तिलकं ललाट पटले वक्षस्थले कौस्तुभं ।
नासग्रे वर मौक्तिकं करतले वेणुं करे कंकणं ॥

सर्वाङ्गे हरिचन्दनं सुललितं कंठे च मुक्तावली ।
गोपस्त्री परिवेष्टितो विजयते गोपाल चूड़ामणिः ॥ १० ॥

भालस्थल कस्तुरी तिलक से मंडित, वक्षःस्थल धृत कौस्तुभमणि, नासिका भागे सुशोभित कर मौक्तिक, हस्त धृत वंशी कंकण, हरिचन्दचर्चित शरीर, कण्ठ धारित मुक्तावली, गोप स्त्री परिवेष्टित श्रीकृष्णचन्द्र हम को जय देवें ॥ १० ॥

फुल्लेंदीवर कान्ति मिन्दु वदनं बर्हावतन्स प्रियं ।
श्रीवत्साँक मुदार कौस्तुभ धरंपीताम्बरं सुन्दरम् ॥
गोपीनां नयनोलत्पार्चित तनुं गोगोप संघावृतं ।
गोविन्दं कलवेणु वादन परं दिव्यांगभूषं भजे ॥ ११ ॥

विकसित रक्तोत्पल कान्ति, चन्द्र वन्दन , बर्ह भूषण प्रिय श्रीवत्स चिन्हित गात्र, कौस्तुभ मणि विभूषित पीत वसन गोपियों के कमल रूपी नेत्रों से पूजित तनु, (सादर अवलोकित) गोप समूह से आवृत्त, भुषणों से विभूषित, मधुर वंशी वाद में रत, श्री गोविन्द भगवान् को हम भजते हैं ॥ ११ ॥

भक्ति ।

(ले० भूमानन्द ब्रह्मचारी)

संसार के समस्त प्राणियों को आनन्द की इच्छा स्वाभाविक होती है जिसका कारण यह है कि सत्‌भ व और आनन्द भाव भगवान् के परमोच्च भाव हैं । यह जीवात्मा उस सच्चिदानन्द आनन्दकन्द सुख सागर का अंश है। अतः उसमें इन भावों का उत्पन्न होना एक स्वाभाविक बात है । परन्तु विचारने की बात है कि इस संसार में क्या किसी को सुख प्राप्त है ? सुख और शान्ति की इच्छा तो हम संसारी जीवों को सर्वदा उत्पन्न होती है। परन्तु उसकी प्राप्त्यर्थ क्या हम कुछ साधन करते हैं ? यह जीवात्मा इस संसृति चक्र में पड़कर अपने अंशी भगवान् से बिछुड़ गया है । उससे बिछुड़ जाने पर चाहे वह संसार का चक्रवर्ति सम्राट् हो चाहे सारे वैभवों का

अधिपति हो, समस्त विद्याओं का भण्डार हो यह सुख शान्ति को तीन काल में भी प्राप्त नहीं कर सकता। जब तक इस जीव का अपने प्रियतम परमात्मा से मिलन न हो और मिल कर आत्मा रूपी प्रेम पुष्प उनके चरण कमलों में समर्पण करके उनकी पूजा न करे तब तक वियोग दुःख से छुटकारा नहीं हो सकता। कर्मी कर्म में, योगी योग में, ज्ञानी ज्ञान में इसी परमात्मा के आनन्द भाव का अन्वेषण करते हैं। परन्तु इन मार्गों में पुरुष को केवल सात्विक सुख का ही अनुभव होता है आनन्द भाव का तो इसमें आभास मात्र ही होता है। केवल एक मात्र भक्ति ही ऐसा साधन है जिसके द्वारा आनन्द के सागर श्री भगवान् में निमग्न होने पर जीवात्मा की प्रबल पिपासा शान्त होगी और श्री भगवान् से विच्छेद जन्य विरहागल की शान्ति होगी। श्रीमद् भागवत का वचन है कि:

श्रेयस्करां भक्ति मुदस्यते विभो
क्लिश्यन्ति ये केवल बोध लब्धये।
तेषामसौ क्लेशल एव शिष्यते
नान्यद्यथा स्थूल तुषावघातिनाम् ॥

हे भगवन्! तुम्हारी कल्याण करने वाली भक्ति को त्यागकर जो केवल ज्ञान लाभ निमित्त क्लेश करते हैं, उनका क्लेश मात्र ही शेष रह जाता है और कुछ नहीं रहता। जैसे चावलों के तुष को कूटने से केवल श्रम ही श्रम है इस प्रकार भक्ति छोड़ अन्य ज्ञानादि की प्राप्ति में भी श्रम ही श्रम है। मनुष्य दान करता है, तप करता है, वेद पढ़ता है, अनेक प्रकार के कल्याण के उपाय करता है परन्तु इन सबों के करने का तात्पर्य यही होता है श्री कृष्णचन्द्र में भक्ति हो। श्री भगवान् गीता में कहते हैं ।

भक्त्यात्वनन्यया शक्य अहमेवं विधोऽर्जुन
ज्ञातुं द्रष्टुञ्च तत्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप ॥
ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥

हे परन्तप! मैं केवल एक अनन्य भक्ति से जानने देखने और पूर्ण रूप से प्राप्त होने योग्य हूं। सब भूतों में सम्बुद्धि रखने वाला, ब्रह्म को प्राप्त हुवा वह प्रसन्न चित्त किसी प्रकार शोक व अभिलाषा की कामना नहीं करता, तब मेरी परम भक्ति का लाभ करता है और भी भागवत के ११ वें स्कन्ध में कहा है:—

भक्ति योगो मन्निष्ठो मद्भवायोपपद्यते ।
तस्माद्देहमिमं लब्ध्वा ज्ञान विज्ञान सम्भवम्
गुण संगं विनिर्धूय मां भजन्तु विचक्षणा ॥

भक्ति योग से मुझ परमेश्वर में निष्ठा करने से मुझ को प्राप्त होता है। इस कारण इस शरीर को पाकर जिस में ज्ञान विज्ञान की पूर्ति सम्भव है, गुण के साथ संग त्याग कर बुद्धिमान् मुझ परमेश्वर की भक्ति करे श्वेताश्वर में कहा है:—

यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ॥
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ।

जिसकी इष्ट देव में परा भक्ति होती है और इष्ट देव की भक्ति के समान ही गुरु में भक्ति होती है उसी सत्पुरुष को वेद प्रतिपादित ब्रह्म का प्रकाश होता है। श्रीनारद पंचरात्र का वचन है:-

सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं तत्परत्वेन निर्मलम्।
हृषिकेण हृषिकेश सेवनं भक्ति रुच्यते ॥
अनन्य ममता विष्णौ ममता प्रेम संगता ।
भक्तिः रित्युच्यते भीष्म प्रह्लादोद्धव नारदैः
मनो गति रविच्छिन्ना हरौ प्रेम परिप्लुता ।
अभि सन्धि विनिर्मुक्ता भक्तिर्विष्णु वशंकरी

इन्द्रियगण द्वारा श्रीभगवान् हृषीकेश की सेवा को भक्ति कहते हैं। जो सब उपाधियों से रहित और निर्मल है। दूसरे सब के प्रति ममता छोड़कर केवल श्रीभगवान् में जो ममता करनी है वही प्रेम है। इसी प्रेम को भीष्म प्रह्लाद, उद्धव और नारदादि ने भक्ति कहा है। श्रीभगवान् में अभिसन्धि रहित, प्रेम परिप्लुत और निरवच्छिन्न मन की गति ही भक्ति है। वही भक्ति विष्णु भगवान् को वश करती है।

भक्ति शब्द "भज सेवायां" धातु से निकला है जिसका अर्थ है कि भगवान् की सेवा करना। वह भगवान् की सेवा अहैतुकी होनी चाहिये उस में स्वार्थ का लेशमात्र भी न होना चाहिये यह जीवात्मा अनेकों योनियों में भटकता भटकता मनुष्य योनि को प्राप्त होता है। यह मनुष्य योनि दयासागर भगवान् इसके कल्याणार्थ इसकी मुक्ति के लिये प्रदान करते हैं। परन्तु यह संसार में आकर राज, पाट, पुत्र, कलत्र को ही अपना इष्ट मान कर उन में रक्त होता। है जब इस जीवात्मा को इस संसारिक विषयोपभोगों से शान्ति नहीं मिलती और विचार कर देखने से इन में केवल दुःख का ही अनुभव करता है तब वह ज्ञान योग में पदार्पण करता है और इन विषयों को अपने बन्धन का कारण समझता है किन्तु जब ज्ञान योग से भी इसकी आत्मा को पूरी शान्ति नहीं मिलती तो वह व्याकुल होकर अपने चित्त को सब ओर से हटा कर केवल शान्ति सागर श्रीभगवान् की खोज में लगाता है और तब वह भक्ति मार्ग के निकट आने के योग्य होता है।

भक्ति ज्ञान और योग से श्रेष्ठ है। इस ज्ञान और योग के भी बहुत थोड़े लोग यथार्थ में अधिकारी हैं क्योंकि ज्ञान के लिये आवश्यक है कि मनुष्य विचक्षण बुद्धि का हो। विद्वान् हो अनेक शास्त्रों का ज्ञाता हो। यह बातें प्रत्येक मनुष्य में तो क्या हजारों में भी मिलनी असम्भव है। इसी प्रकार से योग के लिये भी उत्तम स्वास्थ्य नवीन वयस, पूर्णतया ब्रह्मचर्य का पालन उपयुक्त स्थान, अनुकूल भोजन और सब से बड़ी और दुर्लभ बात है सिद्ध गुरु आदि साधनों की परमावश्यकता। जो एक समय में मिलनी सर्वथा असम्भव है। किन्तु उस करुणावरुणालय जगन्नियन्ता भगवान् को कोटानकोटि धन्य-

बाद है कि जिसने अगोचर और अगम्य होने पर जीवों के कल्याणार्थ भक्ति रूपी ऐसा सुगम सरल पथ निर्माण किया है। भगवान् ने इस सर्वोच्च भक्ति का सब को अधिकारी बनाया है। किसी को भी इस से वंचित नहीं रक्खा है। इस में जाति पांति का विचार नहीं चाण्डाल तक को भी इस का अधिकार दिया है। स्त्री पुरुष का विचार नहीं बल्कि स्त्रियों के लिये तो अधिक सुभीता है। वयस का विचार नहीं बालक वृद्ध सभी कर सकते हैं। विद्या तथा बुद्धि का विचार नहीं पण्डित और मूर्ख दोनों कर सकते हैं। वास्तव में यदि देखा जाय तो पण्डित की अपेक्षा मूर्ख को अधिक सुभीता है क्योंकि पण्डित को अनेक पुस्तकावलोकन द्वारा नानाभान्ति के संकल्प विकल्प हो सकते हैं। परन्तु मूर्ख को इस प्रकार के संकल्प होने असम्भव हैं। धनी गरीब का विचार नहीं, समय और स्थान का विचार नहीं है सुन्दर स्थान में रहने की अपेक्षा निर्जन जंगल में अधिक सुभीता है। श्रीभगवान् गीता में कहते हैं।

मां ही पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपिस्युः पापयोनयः ।
स्त्रियो वश्यास्तथाशूद्रास्तेपि यान्ति परांगतिम् ॥

भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन ! मेरा आश्रय पाकर निकृष्ट योनी में जन्म लेने वाले तथा स्त्री, वैश्य और शूद्र भी उत्तम गति को पाते हैं।

"नास्ति तेषु जाति विद्या रूप धन क्रियादि भेदः"
"अनिन्द्यं स्वोधिक्रियते"

भक्तों में जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रिया के भेद का विचार नहीं है। श्री भगवान् की भक्ति में निन्दित योनि चाण्डालादि को भी अधिकार है।

व्याधस्या चरणं ध्रुवस्य वयो ।
विद्या गजेंद्रस्य का ॥
कुब्जायाः किमु नाम रूपमधिकं,
किंतत् सुदाम्नो धनम् ॥
वंशः को विदुरस्य यादव पते,
रुग्रस्य किं पौरुषं ।
भक्त्या तुष्यति केवल नच गुणैः ।
भक्ति प्रियो माधवः ॥

व्याध का क्या आचरण था ? ध्रुव की क्या वयस थी ? गजेन्द्र को क्या विद्या थी ? कुब्जा की क्या सुन्दरता थी ? ब्राह्मणसुदामा के पास कहां धन था ? विदुर कौनसे उच्च वंश के थे ? यादव पति उग्रसेन का क्या बल था ? तो भी भगवान् ने उन लोगों के प्रति विशेष कृपा दिखलाई। इस से सिद्ध होता है कि भगवान् भक्ति के भूखे हैं भक्ति से ही प्रसन्न होते हैं गुणों से नहीं उन को केवल भक्ति ही प्यारी है जिन पुरुषों ने उन की भक्ति की है उन्हीं पर भगवान् ने अपनी परम पावनी कृपा का विस्तार किया है।

(अपूर्ण)

धर्मोपदेश।

(ले० मुन्शी काराम जी वनस्थी)

भारत देश ने अपने इमसाया मुल्कों और अपनी गई गुजरी हुई दशा के सामने जो सूरत बना रक्खी है, अब वह लोगों के दिल में कुछ२ खटकने लग गई है। और इस मुकाबले में देश के लीडर जान हथेली पर रखकर सिर तोड़ उद्योग करने लग गये हैं, तो भी उसका परिणाम जो हमारी आन्तरिक दृष्टि के सन्मुख भलक मार रहा है उसका चित्र निचे लिखी हुई मिसालों में प्रगट करते हैं।

एक नक्शे के दो पहलू हैं। बाह्य पहलु अपने आन्तरिक पहलु से इतना अधिक मुख्तलिफ है, जैसे दिन और रात अथवा पृथ्वि और आकाश। इसके बाह्य पहलु में क्या हो रहा है!

आहो, मोटी कलम से लिखा हुआ है। "देश की उन्नति के लिये सिरतोड़ कोशिश,,

अगजरा आगे बढ़ते हैं देश का लफ्ज जाति से बदला हुआ पाता है। इस पर्दे में साफ नज़र आता है, कि एक जाति दूसरी के मुक़ाबिले में प्रत्येक भान्ति के अस्त्र शस्त्र धान्धरण भूमी में डटी हुई है और ज़माने हालसे बतला रही है कि चाहे कुछ भी होजाय अपने हरीफ़ को चारों शाने चित्त कर डालूं और जो मांग इसके लिये तैय्यार कररही है वे उन की आइती के लिये उत्सिक्त हैं।

हर एक जाति घोषणा कररही है कि जाति में प्रेम हो, विद्या ग्रहण की जाय, मनुष्य सच्चे त्यागी बनें शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति हो। शादी गमी की व्यर्थ व्यय बन्द किया जावे, पुरानी प्रथाओं का परिवर्तन किया जाय और इस के लिये जो कुछ जहां से मिले झपट लिया जाय। अब दूसरा पहलू लो जिस को लेने के लिये हमें बहुत दूर चलना होगा।

ए लो यहां क्या हो रहा है। देश और क़ौम की उन्नति के शब्द ऐसी फीकी स्याही से लिखे हुये हैं कि सिर्फ कभी २ अपना दर्शन देते हैं परन्तु इस से आगे चल कर क्या देखते हैं कि मनुष्य जातित्व के कारण से जो उन के अन्तः करणों में समाई है, इस का प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के सामने संगीन ताने खड़ा है, अब बताओ तो जातीत्व यहां से कितनी दूर है। कोस नहीं दो कोस नहीं वह तो लाखों कोस दूर खड़ी पुरुषों को कदराई हुई दृष्टि से देख रही है। जब कभी दुःख आपड़ता है तो कभी २ जातित्व का परदा झलक लगाजाता है। इस मैदान जंग को इस प्रकार समझ लो कि जैसे शतरंज का खेल, भेद केवल इतना ही है कि शतरंज के मोहरे जानते हैं कि, गो हम विस्तार का कुछही फरक़ रक्खें परन्तु बलिहाज रंगत एक दूसरे की मदद के लिये हर समय कटिबद्ध रहते हैं। इस में भी यह भेद है कि क़ौमी

मैदान जंग के मौहरे विस्तार और रंगत में एक दूसरे से भिन्न है, उन्हें अपने मित्र, शत्रु का भी ज्ञान नहीं बल्कि वह तो अपनी आंखे बन्द किये हुए चारों तरफ वार कर रहे हैं ।

२. एक गाड़ी के चारों तरफ अनगणित घोड़े नाना आकारों और विस्तारों वाले उस को खींचने के लिये जुते हुये हैं। और इस प्रकार जोर लगा रहे हैं कि वह विवश हो चले हैं परन्तु परिणाम क्या हो रहा है? गाड़ी बस जहां की वहाँ ही स्थित है । इस का क्या कारण है! देख लो इस का दूसरा पहलू यहां तो नाना वर्ण व प्रकार के अनगनित घोड़े मुंह उठाये आंख बन्द किये हुए सरपट दौड़ लगा रहे हैं। परन्तु इस प्रकार प्रत्येक का उद्देश्य भिन्न ही नहीं, बल्कि एक का मुंह दूसरे से नहीं मिलता कोई इधर दौड़ रहा है कोई उधर अथवा उन का पथ भी भिन्न है।

बेचारी गाड़ी घोर कष्ट में है अगर किसी बलवान ने उस को अपनी तरफ चार हाथ खेंच डाला तो दूसरे झटकेमें गई पीछे कोआठ हाथ इस खींचा तानी में केवल गाड़ी ही नहीं बल्कि उस के घोड़े घोर कष्टमें और व्याकुल होंगे।

जिस फौज के अङ्गों में से एक बलिष्ठ अङ्ग कर्म हीन हो गया हो या कट गया हो, अलग हो गया हो तो वह जाति कैसे इस मैदान में दौड़ लगा सक्ती है? जिस की एक टाँग कट चुकी हो वह क्या दौड़ेगा? जिस व्यक्ति की मानसिक शक्ति का अधिक भाग निर्बल हो चुका हो वह क्या कर सकेगा जब मनुष्य का मस्तिक निर्बल हो जाता है तो वह अपनी हानि, लाभ को भी नहीं समझ सक्ता मत पर ही वशीभूत नहीं हो सक्ता। कोई जाति चाहे कोई हो जो इस रण भूमि में बाजी ले जाना चाहती है तो सब से पहले अपनी टूटी हुई टाँग को जोड़े उस पर महंम लगाये पट्टी बान्धे जब दूसरी टांग दृढ़ हो जायगी, जो सांसारिक जीवन का भार उठाने के लिये अधिक लाभ दायक है तो वह अपनी शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक अनन्त शक्ति से दूसरी टांग के पहलू बपहलू मिल कर उस के भार का भारी भाग अपने सिर पर उठालेंगी और अवकाश काल में जब मनुष्य का शरीर दृढ हो जायगा तो उन की समझ में आजायगा कि हमारा सीधा और साफ पथ किधर है वह सरलता से गुजर सक्ते हैं। अपने को आरोग्य बनाने के लिये कुछ साधन करो और अपनी स्त्री समाज को दृढ़ बनादो जो तुम्हारे रोग की चिकित्सा करें। और जो सार गर्भित समस्यायें तुम्हारे सन्मुख उलझी पड़ी हैं वह सरल होजायं और आप से आप सुलझने लगें स्त्री समाज को ऐसी विद्या मिलने की आवश्यकता है कि जिस से वह धर्म, अधर्म के रहस्य को समझ सकें और अपनी आत्मिक शक्ति को बढ़ायें।

जब सूर्य अस्त होने लगता है तो चन्द्रमा और तारे आकाश में दृष्टि पड़ते हैं, और रात्रि भर अपनेर यौवनमें रहते हैं परन्तु जब सूर्य उदय होने लगता है तो सबके सब दौड़ने लगते हैं गो चांद और सितारे किसी पथिक को घोर निशा में कुछ मार्ग भी बतलादें, परन्तु जब सूर्योदय हो जाता है तो इनकी आवश्यकता किसको होती है चंद्रमा और तारों में किसका प्रकाश है? सूर्य का। कब तक? जबतक कि वह अदृष्ट है। साइन्स के कौतुक चन्द्रमा और तारे हैं।

जब समय के दबाव से सूर्य रूपी आत्मिक बल नीचे दब जाता है तो वह चमकने लगता है इनको छोड़ सूर्य प्रकाश में आओ जिससे तुम अपने असली गृह में पहुंच सको। स्त्री समाज के लिये ऐसी विद्या सीखने की आवश्यकता नहीं जो चांद और सितारों की तरह चमकादे बल्कि वह सूर्य के प्रकाश में आजावें ताकि वह पुरुषों को अपने साथ लेती हुई उच्च स्थान पर पहुंचादें जो काम स्त्रियों ने कर दिखलाये वह पुरुषों से न हो सका।

खुसरवादर इश्क़ बाज़ी
　कम्म् हिन्दू जन मबाश,
कू बराये मुर्दा सोज़द
　ज़िन्दा जाने ख़ेशरा।
हम च हिन्दू जन कसेदर
　आशिकी मरदां न नेस्त
बर्चराग़े मुर्दा कुश्तन
　कारे हर परवां न नेस्त ॥१॥

अर्थः—ऐ खुसरो प्रेम के क्षेत्र में हिन्दू स्त्रियों से कम मत रहना वह कौन है जो मुर्दे के लिये अपनी जीती जान को स्वाहा करे। हिन्दू स्त्रियों की तरह प्रेम के क्षेत्र में कोई मर्दाना नहीं है। बुझे हुये दीपक पर जल मरना प्रत्येक पतंग का कार्य नहीं।

स्त्री समाज में प्रेम की शक्ति है उनमें भक्ति है उनमें कुर्बानी के प्रमाण अधिक हैं इस प्रेम के विषय में उनसे मदद लो क्योंकि बिना प्रेम की शक्ति के तुम कोई कार्य सिद्ध नहीं कर सकते।

॥ भक्ति और प्रेम ॥

ले० श्रीयुत 'कुबेर' वागीश

वर्तमान संसार की स्थिति और अर्वाचीन कालकी परिस्थिति को गौर से ध्यान में लाया जायतो-भक्ति और प्रेम का परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है विपयान्तर में इसका एक रूपमें परिवर्तन होजाना भी असम्भव नहीं संसार में 'मित्रभक्ति, व्यसन भक्ति, शिक्षक-भक्ति, ईशभक्ति' उधर 'मित्र प्रेम' भार्या प्रेम, पुत्र प्रेम' अनुज प्रेम, और ईश प्रेम, इनदोनो विषयों के विपयान्तर करने पर 'मित्र और

ईश' दोनों जगह समान अधिकार के अधिकारी हैं भार्या पुत्रादि दा भक्त कोई नहीं होसक्ता इसी तरह से शिष्यकादि से प्रेम की हरकत करना भी अनधिकार चेष्टा है। पाठकों को मैं विशेष झगड़े में मैं नहीं डालना चाहता तात्पर्य यह है कि भक्ति और प्रेम किसे कहते हैं और इनमें कितना अन्तर है प्रसिद्ध दृष्टान्तों में मित्र सम्बन्धि प्रेम और भक्ति के लिये भगवान् श्री राम और सुग्रीव की गाथा प्रसिद्ध है वही राम आगे चल विभीषण के साथ मित्रता कर उदारता का परिचय देते हैं यद्यपि गौर की दृष्टी से देखा जाय तो इसमें स्वार्थ की झलक झलकती लेकिन भगवान् राम ने जन्मान्तर में जाकर कितनेही निस्वार्थ कार्य्य कर दृष्टान्त रत्न बनाये हैं सुग्रीव मित्र होता हुआ भी राम का भक्त था, तथा मित्र भाव से दोनों के अन्दर प्रेम का भी अङ्कुर प्रसंशनीय था जैसा कि उन्होंने अयोध्या लौट कर भरत के प्रति कहा है कवि कालि दास अपनी कवितामें उस अमृत मयी वाणी का उल्था करते हैं रघुवंश १३ वां सर्ग ७२ वां श्लोक-

दुर्जात बन्धु रयमृक्षहरीश्वरो मे।
पौलस्त्य एष समरेषु पुरः प्रहर्ता ॥
इत्यादतेन कथितौ रघुनन्दनेन,
व्युत्क्रम्य लक्ष्मण मुभौ भरतो ववन्दे ॥

भगवान् राम से मिल भरत लक्ष्मण के मिलने की इच्छा से आगे बढ़ते हैं उसी समय राम सुग्रीव और विभीषण का परिचय देते हुये उनको विपत्ति का सहायक बतलाते हैं क्याराम जिनको कि साक्षात् आस्तिकजन मुक्त कण्ठसे ईश्वर जगदीश का अवतार कहते हैं उन पर विपत्ति और फिर उसके हटाने के लिये सहायकों की आवश्यकता यह उपहासनीय बात है लेकिन इस समय भगवान् राम भक्ति और प्रेम के डोर में बद्ध हैं और यह दिखलाते हैं कि-

भक्तों के प्रति प्रेम भगवान् को किस तरह से करना पड़ता है, इसी तरह के बहुत से दृष्टान्त रामकी रामायण से ही हमें मिल सक्ते हैं तथापि रामका जन्मान्तर इससे भी बढ़िया दृष्टान्तनीय है वहीं राम कृष्ण रूप में प्रकट होते हैं अब आपको इस जीवन में कोई ऐसा उदाहरण नहीं मिलेगा जिसमें किस्वार्थ की झलकहो, कौरवों की क्रूरता के दण्डमें यह कहना कि अर्जुन से प्रेम होने की वजह स्वार्थ नहीं क्योंकि राम रूप में सुग्रीव से प्रेम कर बाली वध रामका सीता को छुड़ाना ही स्वार्थ स्वरूप लोग कहते हैं लेकिन कृष्ण और अर्जुन के प्रेम के बाद कोई स्वार्थ कौरवों के वध का नहीं दीखता शिशुपाल आदि के वध में भी दुष्टों को मारना भगवान् के कथित गीता वाक्य को ही दृढ़ करता है जिसको कि आम लोग लिख कर भगवान् को उलाहने का पात्र बनाते हैं कि आपकी गीता यह बतलाती है कि-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानि र्भवति भारत
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्

जबजब धर्म का नाश होता है तब २ मैं अधर्मका नाश करने के लिये उत्पन्न होता हूं, अब इसे से ज्यादा और क्या अधर्म होगा आपके भोग की वस्तु जिससे तैय्यार होती है वह भी अधर्मियों ने अशुद्ध रूपमें परिणत करदी जैसे खंड घृत रहा दाल रोटी का सब से गरीबी भोजन भी विदेशी आटे के रूपमें बदल दिया ठीक है, तुम लोगों को फिर स्वार्थी कहने का भगवान् मौका नहीं देंगे वह अपनी की हुई प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ेंगे वह क्या "यदा यदा हि धर्मस्य,, इस श्लोक से सम्बन्ध रखता हुआ दूसरा श्लोक "परित्राणाय साधूनां विनाशाय चदुष्कृताम्" इसका सम्बन्ध इसी श्लोक सो मिलाना पड़ेगा अभी हमको यह अधिकारही नहीं जिससे कि भगवान् को अपनी करी हुई प्रतिज्ञा का स्मरण दिलावें सारा संसार यदि आर्त्त नाद करे, तब भी जितने भी कर्तव्य व्रती बड़े से बड़े हैं यदि उनकी कर्तव्य लाईन देखी जाय तो मालूम होगा कि कर्तव्य भ्रष्ट हो रहे हैं क्योंकिवह कहते हैं 'परित्राणाय साधूनां' संसार में तुम कितने अपने कर्तव्य में तत्पर होमुझे अपने मूर्धन्य समान पर आक्षेप नहीं करना लेकिन इतना अवश्य कहना है कि हम, "यदा यदा हि धर्मस्य" इसश्लोक को सार्थक करनेके लिये प्रार्थी होते हैं तो साधु बनें नहीं तो अनधिकार चेष्टा करने का हम कोई हक नहीं रखते जिस समय हम कर्तव्य पथपर चलेंगे उसी समय भक्ति करने के अधिकारी होंगे और भक्त बनने के बाद भगवान् भी प्रेम की दृष्टी जभी फेरेंगे जिस समय भक्ति और प्रेम एक होंगे उस समय ही सुख शान्ति होगी अन्यथा स्वराज्य के बाद हम आराम से रहें यह असम्भव है जब तक भक्ति और प्रेम इनमें अन्तर है वहभी बड़ा फन्दा चौड़ारहेगा तबतक वर्तमान परिस्थिति ही हम लोगोंके हृदय परराज्य करेगी कर्तव्यपथपर चल कर भक्त का भक्ति करना ही सार्थक है ऐसा करने पर प्रेम का मिलजाना कोई असम्भव नहीं। भक्ति हम ईश्वर की जभी करसक्ते हैं जब ईर्षा रूपी कांटा निकाला जायगा और हम प्रेम से सम्बन्ध जोड़ेंगे। तथा प्रेमनारायण भी तभी कृपा करेंगे जब हम भक्ति को मुख्य ध्येय बनायेंगे। वह दिन तो शीघ्र ही आयेंगे जिसकी कि सब को उत्कण्ठा है लेकिन देर से, यह कह देना भी अनुचित नहीं होगा ॥

हिन्दू लड़कियों के साथ

कपट और छल।

(ले० श्री० भगतराम छावनी फिरोजपुर।)

पाठकगण ! इस संसार में अच्छे व बुरे सब ही प्रकार के मनुष्य रहते हैं। अच्छे और बुरे लोगों की पहिचान बाह्य तौर पर

कुछ मालूम नहीं पड़ती केवल दूसरों के साथ वास्ता पड़ने पर ही मनुष्य के स्वभाव का असल पता लगता है। कई दुष्ट पुरुष अपना बाहर का बर्ताव ऐसा मधुर और प्रिय कर दिखाते हैं, कि बहुधा बड़े २ होशियार पढ़े लिखे पुरुष भी धोखा खा जाते हैं।

रुपया पैसा या माल असबाब के लेन देन में मनुष्य एक बार किसी से धोखा खा जावे, तो वह जब चाहे उससे अलग हो सक्ता है। और उसे फिर भी अपनी दशा को सुधारने का काफी अवसर मिल जाता है। परन्तु हिन्दू लड़कियों के लिये विवाह की रीतियां आज कल ऐसी धर्म हीन और न्याय रहित हो रही हैं, कि यदि एक बार कोई हिन्दू लड़की दैव भाव से किसी निर्दई पति के वश में पड़ जाय तो फिर उस को अपनी जान के बचाव के लिये ऐसे पति से छुटकारा पाना भी बड़ा कठिन हो जाता है। और प्रत्युत्तर इस के यदि पति चाहे तो वह अपनी नेक स्त्री को भी हर दशा में अलग कर सकता है। उस को कोई नहीं पूछता। अतः ऐसी बे इन्साफियों के होते हुये हिन्दू ब्याह शादी के बारे में सोच विचार करने की बड़ी भारी ज़रूरत है।

यदि कोई मनुष्य अपना थोड़ा सा धन किसी को उधार देता है। तो अपने मन की तसल्ली के लिये सरकारी इस्टाम्प लिखवाता और साक्षियां मांगता है परन्तु अत्यन्त शोक है कि हमारे हिन्दू भाई अपनी लड़की को एक अजनबी वर के हवाले करते समय अपनी लड़की के सुख वास के लिये वर की तरफ़ से कोई ऐसी पाबन्दी (रक्षा के तौर पर) नहीं करवाते, कि जिस से उस लड़की के साथ आगे को उस के नये घर अर्थात् श्वसुराल में कोई बद सलूकी न हो सके।

हिन्दुस्तान में हिन्दू लड़कियों के अधिकार की परवाह प्रायः बहुत कम की जाती है सोसाइटी के हर एक दरजे में बहुधा कर के लड़कों ही के लिये बहुत रियायतें रक्खी गई हैं। इसी कारण हिन्दू बिरादरियों में लोग लड़कों और लड़के वालों ही का पक्ष लेते रहते हैं। दूसरी तरफ़ लड़की के साथ ख्वाह कैसा ही सख्त अन्याय हो; तो भी बिरादरी के चौधरी चुप हो जाते हैं इस प्रकार के अन्याय को दूर करना तो अलग रहा उलटा ऐसा कह कर कि "आज कल का रिवाज यही है" सर्व साधारण को धोके में डालते रहते हैं। और यह एक बड़ा कारण हिन्दू क़ौम की अधोगती का बन रहा है॥

यहां पर हम आज कल की प्रायः हिन्दू शादियों के अन्दर कई एक कुरीतियों का वर्णन करते हैं। और साथ ही इन के यथा योग्य सुधार निमित्त अपनी तरफ़ से कुछ उपाय (तजवीजें) पाठक गण के विचारार्थ लिखते हैं:—

देखिये जब कोई पुरुष अपनी लड़की के वर को देखने जाता है। तो वर के अड़ोसी पड़ोसी लोग बहुत सी ग़लत ख़बरें दे दिया करते हैं। और यदि कोई लड़का ऐबी भी हो, तो भी उस के ऐबों को प्रायः छिपाये रखते हैं। इस तरह जो लोग किसी अयोग्य अथवा दुष्ट वर को योग्य बताने का यत्न करतेहैं तो वह अपने आप को भी धर्म और उच्च पद से नीचे गिरा देते हैं।

(२) विवाह के समय पर जो ज़ेवर व क़ीमती कपड़े स्त्री धन के नाम से हिन्दू लड़कियों को दिये जाते हैं। वह बहुधा इधर उधर से मांगे हुए होते हैं। और सुसराल घर में लड़की के पहुंचते ही उन में बहुत से जेवर तरह २ के हीले बहानों से छीन लिये जाते हैं। और अतिरिक्त इस के सुसराल वाले अपनी ऐसी दुष्टता को छिपाने के लिये अबला स्त्रियों के साथ और भी कई प्रकार की धोखे बाज़ियां करते रहते हैं। अतः नेक दिल और न्यायकारी मनुष्यों को उचित है, कि वह विवाह के अवसर पर वर की तरफ़ से चढ़ाये हुये जेवरों और वस्त्रों की एक फ़ेहरिस्त उसी वक्त पंचायत के सामने तैयार कर दिया करें। और वहां पर उपस्थित माननीय पुरुषों में से दो तीन की यह तसदीक़ भी करा दिया करें। कि उन में से कोई चीज़ किसी अन्य से मांगी हुई नहीं है। और यह सब लड़की का स्त्री-धन होगा। ऐसा कर देने में कोई बुराई नहीं है। प्रत्युत एक प्रकार से हिन्दू अबला लड़कियों पर न्याय और धर्म करना है। इस प्रकार सुधार करने से जहां बहुत फ़ालतू दिखलावे के रिवाज कम होंगे। वहाँ साथ ही साथ हिन्दू क़ौम में सच्चाई और न्याय का अंश बढ़ेगा॥

(३) हिन्दू क़ानून के अन्दर स्त्रियों के अधिकार स्पष्ट तौर पर निश्चित नहीं हैं। योंही दिखलावे मात्र उन को कभी "अर्द्धाङ्गिनी" कभी "गाड़ी का बराबर का पैया" और कभी "घर की मालिकनी कहे जाना कुछ भी असर नहीं रखता। जैसा कि यह कथन भी है:-

There is no right except right based on Law.

अर्थात् उस अधिकार को अधिकार नहीं कहा जा सकता। जिस की रक्षा किसी कानून की ओर से क़ायम न की गई हो। इस लिये शादी के अवसर पर चढ़ाये हुये जेवरों का निश्चित करा देना कि यह सब स्त्री धन है -अति आवश्यक है॥

(४) कई पति पहले पहल तो बड़े मुलायम और मीठे मालूम देते हैं। परन्तु शीघ्र ही विवाह हो जाने के पश्चात् उन का रुख ऐसा बदल जाता है। कि वह अपनी स्त्री को बड़े जरूरी अवसरों पर भी उस के माता पिता से मिलने जुलने तक नहीं देते।

और कई प्रकार से बद-सलूकियाँ करने लगते हैं। इस तरह कई स्त्रियाँ तड़फ २ कर मर खप जाती हैं। इस लिये लड़की का विवाह करने से पहले आज कल ऐसा निश्चित कर लेना भी अनुचित नहीं होगा, कि लड़की को जब आवश्यकता हो अपने माता पिता के पास आने जाने का पूरा अधिकार रहैगा।

(५) सब से ज़्यादा ज़रूरी बात यह मालूम होती है कि माता पिता अपनी लड़की का विवाह बालिग़ (अर्थात् पूरे १८ साल की) हो जाने पर ही किया करें। क्योंकि यदि कहीं ससुराल घर में किसी लड़की के साथ सख़्ती होगी; तो वह लड़की बालिग़ होने की सूरत में अपना बचाव स्वयं बहुत सा कर सकेगी और यदि १८ साल से कम उमर में शादी की जावेगी, तो फिर उस को अपनी रक्षा करने में बड़ी रुकावटें होती रहेंगी। परन्तु नाबालिग़ होने की अवस्था में यदि उस के ऊपर सख़्त जुल्म भी होते हों तो भी लोग उस की बात पर जल्द विश्वास नहीं करते।

इस लेख का उद्देश्य स्त्री और पुरुष दोनों के अधिकारों की न सिर्फ़ रक्षा करना है, बल्कि हिन्दू जाति को ऐसी गिरी हालत से उठा कर उस को उच्च पद की ओर ले जाना भी है। क्योंकि स्त्री जाति का उद्धार किये बिना कभी कोई क़ौम उन्नत नहीं हो सकती और फिर जिस धर्म से स्त्री जाति का उद्धार न हो वह धर्म ही क्या है? इस लिये आशा है कि पाठक गण इन उपरोक्त तजवीज़ों पर बड़े विचार के साथ ध्यान देंगे।

भजन।

बङ्गला भला बना दरवेश,
जा में नारायण परवेश ॥टेक॥
पांच तत्व की ईंट बनाई,
तीन गुणों का गारा।
छत्तीसों की छात बना कर,
चिन गया चिनने हारा ॥१॥
इस बङ्गले के दश दरवाजे,
बीच पवन का थम्भा।
आवत जावत कोऊ न जाने,
देखो बड़ा अचम्भा ॥ २ ॥
इस बंगले में चौरड़ मांडी,
खेलें पाँच पचीस।
कोई तो बाजी हार चला है,
कोई चला जुग जीत ॥३॥
इस बंगले में पातर नाचे,
मनुवा ताल लगावे।
सुरत निरत के पहर घूंगरू,
राग छत्तीसों गावे ॥ ४ ॥
कहें मछन्दर सुन बाले गोरख,
जिन यह बंगला गाया।
इस बंगल के गाने वाला,
बहुर जन्म नहीं आया ॥५॥

निष्काम कर्म।

(ले० श्री० श्रुतानन्द ब्रह्मचारी।)

इस संसार में जितने भी प्राणि हैं उनको कुछ न कुछ कर्म अवश्य करना पड़ता है श्री भगवान् गीता में कहते हैं कि:-

"नहि कश्चित्क्षण मपि जातुतिष्ठत्यकर्म कृत"

कि हे अर्जुन! इस संसार में कोई भी प्राणी एक क्षण भी बिना कर्म के नहीं रहता।

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन।
नानावाप्त मवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि॥

हे पार्थ यद्यपि मुझे तीनों लोकों में कुछ कर्तव्य नहीं तथा कोई अप्राप्त वस्तु प्राप्त भी नहीं करनी तो भी मैं कर्म करता हूं। जब तक जीव संसार में है तब तक उसे कर्म अवश्य करने चाहियें परन्तु वह कर्म निष्काम बुद्धि से करने चाहियें जो मनुष्य कर्म में अकर्म और अकर्म में कर्म देखता है वही बुद्धिमान् है वही सत्कर्मी है। यज्ञ, दान तप आदि कर्म त्यागने योग्य नहीं हैं। आगेचल कर कहते हैं कि:-

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।"

हे अर्जुन! तेरा कर्म करने में ही अधिकार है। कर्म के फल की इच्छा न कर।

जब हम व्यवहार में भी देखते हैं कि यदि किसी के साथ हम यत्किंचित् भी निष्काम कर्म करते हैं तो दूसरा हम पर प्राण तक न्योछावर करने को उद्यत होजाता है। फिर भला भगवान् की तो बात ही क्या है।

एक समय किसी सधारण मनुष्य ने एक महात्मा से पूछा कि "महाराज! मुझे राजा के दर्शन किस प्रकार से हो सकते हैं"। महात्मा ने कहा कि राजा के किले पर बहुत से श्रमजीवि कार्य कर रहे हैं तुभी वहां जाकर काम करने लग जाना जब कोई तुम को नौकरी दे तो कहदेना कि मैं राजा का कार्य कर रहा हूं यदि राजा से भी नौकरी लूंगा तो मेरी राज भक्ति ही क्या है। वह मनुष्य राजा के किले पर जाकर कार्य करने लगा। सायंकाल को जब ठेकेदार सब को वेतन देने लगा तो उसने लेना अस्वीकार किया और कहा कि मैं तो राजा का कार्य निष्काम भाव से ही करूंगा। इस प्रकार से धीरे धरे बड़े २ पदाधिकारियों के कानों तक यह बात पहुंच-गई। किसी ने राजा से भी कहा कि महाराज एक ऐसा पुरुष किले पर काम कर रहा है जो नौकरी ही नहीं लेता वह कहता है कि मैं राजा से नौकरी लेकर कार्य करना पाप समझता हूं। राजा यह सुन कर उसे देखने को स्वयं किले पर आये। और उस मनुष्य को देखा। तब उस मनुष्य ने विचार किया कि जिस प्रकार से इस देश के अधिपति के प्रति निष्काम कर्म करने से दर्शन तथा अनुग्रह का भाजन हुआ हूं जो मुझजैसे साधारण जीव के लिये कठिन ही नहीं असम्भव था इसी

प्रकार यदि मैं जो सारे विश्व का अधिपति हूँ उस के प्रति निष्काम कर्म करूं तो क्या वह कृपालु दया के सागर मुझे को दर्शन नहीं देंगे ? ऐसा सोच कर वह मनुष्य भगवान् के प्रति निष्काम कर्म में प्रवृत्त हुवा।

अनाश्रितः कर्म फलं कार्य कर्म करोति यः ।
स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥

जो कर्म के फल पर आश्रय न रख के केवल कर्तव्य जान कर्मों को करता है वही संन्यासी है और वही योगी है जिसने केवल अग्निहोत्रादि कर्मों को त्याग दिया वह सन्यसी नहीं ।

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्म पत्र मिवाम्भसा ॥

जो आसक्ति त्याग कर और सब कर्मों को ईश्वर में अर्पण करते हुए कर्म करता है वह जिस प्रकार जल से कमल पत्र लिप्त नहीं होता उसी प्रकार पाप से लिप्त नहीं होता है।

भक्ति।

प्रिय पाठकगण! भक्ति का आविर्भाव सेवा और प्रेम के उद्देश को लेकर हुआ है। सेवा जहां सेवक और सेव्य दोनों के लिए आनन्द दायक है वहां यह सेवक के लिए बड़ी कठिन और दुःसाध्य है। यद्यपि इसके परिणाम और फल में शंका कभी भी नहीं है कारण यह प्रत्यक्ष योग है परन्तु यह कांटों से घिरी हुई है। इसके दुधारे कांटे सेवक और सेव्य दोनों पर अपना डंक चलाते हैं। वह ऐसे देखने में आता है कि सेवक रात दिन बड़े परिश्रम, श्रद्धा और प्रेम से सेवा करते २ आलस्य या अज्ञान-वश कोई त्रुटि करदेता है तो प्रेमी के मनमें बड़ी चोट लगती है इस चोट को वर्णन क्या किया जा सकता है और वर्णन करने की आवश्यकता भी क्या है यह हम सबका नित्य का अनुभव है परन्तु सेवक को उसके प्रतिफल स्वरूप वह चोट कहीं अधिक होकर लगती है। प्रेम में यह बात अवश्यम्भावी है। इसका एक ही प्रतिकार है और वह है क्षमा। इसके अतिरिक्त और कोई भी औषधि न कभी निर्माण हुई और न होसकती है। रोग लम्बा न होवे उसका उपाय है अपने भाव को शीघ्र ही प्रगट कर दिया जावे। हमारा और आपका यही सम्बन्ध है। हमने "भक्ति" द्वारा आपकी सेवा करने का निश्चय तो कर लिया है परन्तु हम भावुक हैं यह हमारा भाव मात्र है यथार्थ में न तो हम इस योग्य है और न हम में यह शक्ति है। हममें तो भगवान् और उसके भक्तों के भरोसे गुदड़े लादकर सफर पर खड़े होगए हैं। इस सफर में आप हमारे साथी हैं। यद्यपि इस सेवा में यह दिखाई देता है कि बल्ली हमारे हाथ है परन्तु सत्य तो यह है कि बल्ली, पैसा, नाव और हम तुम सब भगवान् के हाथ में हैं और वास्तव दृष्टि से हम सब समान हैं। पत्रिका के नाते से आप "भक्ति" के मालिक व कुटुम्बी हैं कारण पत्र का मूल्य नहीं होता है बल्कि उसका चन्दा होता है। पत्र के लिए

मूल्य और ग्राहक शब्दों की उत्पत्ति अभी हुई है जिसका कारण लोगों की व्यापारिक वृत्ति है। पत्रों का आविष्कार व्यापार के लिए नहीं वरन किसी उद्देश विशेष की पूर्ति के लिए समान विचार वाले सज्जनों का मिलकर पत्र द्वारा काम करना होता है। और अंग्रेजी में इसके लिए Subscription चन्दा और Subscribers चन्दा देने वाला शब्दों का प्रयोग होता है रहा काम का सम्बन्ध सो जैसे निष्काम भाव और प्रेम के नाते से आपने भक्ति को अपनाया है वैसे ही "भक्ति" के सेवकों ने भी अपने को इस मित्र-समूह में निःस्वार्थ और निष्काम भाव से मिलाया है। अब सबका पवित्र कर्तव्य यह है कि हम भक्ति के सन्देश को लोगों तक पहुंचावें। भक्ति के सम्पादन और संचालन में त्रुटियां हैं और यह दुर्बल है। हम इसकी त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न करेंगे और इसको शक्तिशाली बनाने का उद्योग करेंगे परन्तु इसमें आपके प्रेम, सहानुभूति और सेवा की भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि हमारी। हमारा आपसे यह नम्रनिवेदन है कि आप क्षमा को धारण करते हुए निः संकोच भाव से हमारी सेवा की त्रुटियों को प्रगट करें और भक्ति में जो कुछ आप देखना चाहें उससे सूचित करें। हमरी तरफ से यह आग्रह पूर्वक प्रार्थना सदैव बनी रहेगी कि आप "भक्ति" के परिवार को बढ़ावें। 'भक्ति' के कम से कम कम हजार कुटुम्बी शीघ्र हो जाने चाहिएं। कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत है। संसार के वर्तमान अशान्त और दुःखी जीवन में भक्ति के व्यापक रूप को व्यक्त करने की बड़ी जरूरत है। यह संसार सेवा और प्रेम के बिना निःरस सा बन गया है। भगवद्भक्ति, मातृ-भक्ति पितृ-भक्ति, देश भक्ति, भ्रातृ-भक्ति, स्वामी भक्ति इत्यादि भक्ति को उसके अनेकों रूपों में प्रस्फुटित करने का पवित्र काम हम लोगों ने हाथ में लिया है उसके लिए बड़े पुरुषार्थ की जरूरत है। आओ मिलकर काम करें भगवान् का काम है वह आप ही निर्वाह करेंगे॥

मेरा।

कौन दैव लग्न में मेरा शब्द संसार में स्फुरित हुआ था कि जिस को देव, दानव, मानव किसी की बुद्धि स्थिर नहीं कर सकी जैसे अनन्त देव अपने सहस्र मस्तकों पर सारे संसार के भार को उठाये हुये हैं वैसे ही (मेरा) यह शब्द भी पृथ्वी की समस्त घटनाओं का कारण हो रहा है मेरा इस शब्द में कैसा मोहक गुण है और इस में कैसा जादू भरा है कि यह किसी की समझ में नहीं आता तुम्हारा बालक कैसा ही सुन्दर हो मेरा चित्त सहसा आनन्दित नहीं होता, परन्तु मेरा पुत्र यदि कदाकार (बदसूरत) भी हो तो बारम्बार देखने पर भी नयनों की प्यास नहीं बुझती।

जो कार्य दूसरे के लिये साधा जाय सामान्य होने पर भी अति क्लेश दायक मालुम पड़ता है परन्तु उस से शत गुणा अधिक क्लेश साध्य भी कार्य यदि मेरा होतो प्राणपन से साधन करने में भी क्लेश नहीं होता दूसरे के अधिकार का कोई द्रव्य नष्ट हो जाय तो उस में दुःख नहीं होता परन्तु वही पदार्थ यदि (मेरा) होता उस के यत्न करने की सीमा ही नहीं मिलती। आज दूसरों के जिन जिन पदार्थों की निन्दा किया करता हूं यदि कल वही सब (मेरा) हो जांय तो बिना प्रशंसा किये नहीं रहा जाता। तुम्हारा गुण, तुम्हारी विद्या, तुम्हारा यश सुनने में क्लेश होता है परन्तु (मेरा) होतो निरन्तर सुनने में कातर नहीं होता तुम्हारी उँगली में सोने की एक अंगूठी भी देख कर सहा नहीं जाता परन्तु मेरा होने से सारे अङ्ग में सोने का बोझ सानन्द सहन कर सक्ता हूं दूसरों का थोड़ी सी पृथ्वी पर अधिकार देख कर जलन होती है परन्तु सारा भूखण्ड 'मेरा, हो जाय तो इस के यत्न की सीमा नहीं रहती।

'मेरा, इस शब्द ने जन्म लेते ही पिता माता का ग्रास किया देखते देखते भाई बहिन का ग्रास किया अवसर पाकर स्त्री पुत्र कलत्र कुटुम्ब परिवार को भी ग्रास किया फिर घर द्वार, कार, बार, आदि का भी ग्रास करने में त्रुटि नहीं की, कुछ २ से दूसरों का धन सँपत ग्रास करने में ऊणा हुआ, त्रिभुवन का ग्रास करके भी 'मेरा पेट नहीं भरा, माया राक्षस रूप धारी इस 'मेरा, शब्द ने कीट से लेकर ब्रह्मा पर्यन्त सब को मोहित कर रक्खा है। मेरे हृदय में मेरा शब्द अतिप्रिय मालुम पड़ता है, मेरा शब्द में मैं ऐसा मोहित हो रहा हूं कि कभी विचार भी नहीं करता कि जिन २ वस्तुओं को मेरा समझ रक्खा था उन में से एक भी मेरी नहीं ठहरी, मेरा शरीर मेरे वश में नहीं, मेरी इन्द्रियें मेरी बगल में नहीं, मेरे चित्त पर मेरा अधिकार नहीं तब भी, मेरा कहते हुये लज्जा नहीं आती। हाय ? मेरा इस भ्रम ने ही सर्व नाश किया, यथार्थ में क्या मेरा है इस का विचार नहीं किया जिस सम्बन्ध से मेरा कहता हूं कभी इस गम्भीर भाव को शुद्ध अन्तःकरण में नहीं सोचा कि जिन का सकल ब्रह्माण्ड है जिनका सब कुछ है और जिन का मैं हूं जब उन को 'मेरा, कह सकूं जब उन के सम्बन्ध से सकल पदार्थों को मेरा समझ सकूं तब ही मेरा का गूढ़ भेद मालूम पड़ेगा और "मेरा" कहना सार्थक होगा।

मेरा मेरा सब कहैं तेरा सब कुछ तोहि ।
तेरा तुझ को कहत हि क्या लागत है मोहि ॥
मेरा मुझ में कुछ नहिं, सबकुछ है सो तोर ।
तेरा तुझ को सौंपते क्या कुछ लागे मोर ॥

कवित्त।

मेरी देह मेरी गेह मेरो परिवार सब,
मेरो धन माल मैं तो बहुविधि भारो हूं।
मेरे सब सेवक हुकम कोऊ मेटे नाहीं,
मेरी युवती को मैं तो अधिक पियारो हूं॥

मेरो वंश ऊंचो मेरे बाप दादा ऐसे भए,
करत बड़ाई मैं हो जगत उजारो हूं ।
सुन्दर कहत मेरो मेरो ही जाने शठ,
ऐसे नहिं जाने मैं तो काल ही को चारो हूं ।

(कृष्णानन्द)

॥ भजन ॥

राधा माधव भेंट भई ॥ टेक ॥
राधा माधव, माधव राधा,
कीट भृंग गति होय जो गई ॥१॥
माधव राधा के रंग राचे,
राधा माधव रंग रई ॥२॥
माधो राधा प्रीति निरन्तर,
रसना कही न गई ॥३॥
विहंस कह्यो हम तुम नहीं अन्तर,
यह कहि ब्रज पठई ॥४॥
सूरदास प्रभु राधा माधव,
ब्रज विहार नित नई नई ॥५॥

॥ भजन ॥

माधव आवन हार भये
आवन हार भये॥ टेक ॥
अञ्चल उड़त मन होत गद गदो,
फरकत नयन खये ॥१॥
देहि देखि सोच जिय अपने,
चितवत सगुन दये ॥२॥
ऋतु बसन्त फूली द्रुम बल्ली,
उलहे पात नये ॥३॥
करति प्रतीति आगु आवन की,
सजन श्रृंगार ठये ॥४॥
सूरदास प्रभु मिलहु कृपा करि,
अवधिहु पूजि गये ॥५॥

॥ भजन ॥

चलहु देर मत कीजे,
अब हम जन्म भूमि नाहिं ॥टेक॥
यद्यपि तुम्हारो हतो द्वारका,
मथुरा के सम नाहीं,
यमुना के तट गाय चरावत,
अमृत जल अंचवाहीं ॥१॥
कुञ्ज केल अरु भुजा कन्ध धरि,
शीतल द्रुम की छाहीं ॥२॥
सरस सुगन्ध मन्द मलया गिर,
विहरत कुञ्जन माहीं ॥३॥
जो क्रीड़ा श्री वृंदावन में,
तिहूं लोक में नाहीं ॥४॥
सुरभि ग्वाल नन्द और यशुमति,
मम चित ते न टरा हीं ॥५॥
सूरदास प्रभु चतुर शिरोमणि,
सेवा तिन की कराहीं ॥६॥

॥ भजन ॥

मिलियो जननी मेरी को,
ऊधो अरु कहियो कुशलात ॥टेक॥
यशानन्द ही पालागन कहि

पुनि चरण गहीयो ॥१॥
जा दिन से मधुवन हम आये,
शोधि न तुम ही लीनो ॥२॥
दे दे सौंह कहोगे हित कर,
कहा निठुराई कीनो॥३॥
यह कहियो बलराय श्याम अब,
आवेंगे दोऊ भाई ॥४॥
सूर कर्म की रेख मिटे नहीं,
यह कह्यो रघुराई ॥५॥

॥ भजन ॥

गये हरी परदेश बहुत दिन लायेरी ॥टेक॥
कारी घटा देखि बादर की,
नयन नीर भर आयेरी ॥१॥
बीर बटाऊ पन्थी हो तुम,
कौन देश ते आयेरी ॥२॥
यह पाती हमरी ले दीजो,
जहां सांवरे छायेरी ॥३॥
दादुर मोर पपहियहा बोलत,
सोवत मदन जगायेरी ॥४॥
सूरदास गोकुल ते बिछुरे,
आपन भये परायेरी ॥५॥

॥ भजन ॥

कहा परदेशी को या जग में पतियारो॥ टेक॥
प्रीति बढ़ाय चले मधुवन को,
बिछुर दियो दुःख भारो ॥१
पीछे ही पछिताइ मिलोगे,
प्रीति बढ़ाय सिधारो ॥२॥
ज्यों मृग नाद नाद के बींधे,
लाग्यो बान बिसारो ॥३॥
प्रीति के लिये प्राण वश कीनो
हरि तुम यही विचारो ॥४॥
ज्यों जल हीन मीन तरफत है,
ऐसो ही हाल हमारो ॥५॥
सूरदास प्रभु के दरशन बिन,
ज्यों बिन दीपक भौन अंधियारो॥६॥

भजन।

लोचन लालच ते न टरें ॥टेक॥
हरिमुख निरखत रंग संग ज्यों,
दीपक शलभ जरें ॥१॥
ज्यों मधुकर रुचि रच्यो केतकी,
कण्टक कोटि अरें ॥२॥
तैसे ही लोभ तजत नहीं लोभी,
फिर फिर फेरी फिरें ॥३॥
मम ज्यों शहत सहज सरदारन,
सन्मुख ते न टरें ॥४॥
जानत आहि हने तनु त्यागत,
ता पर हित ही करें ॥५॥
समझ न परै कवन सच पावत,
जीवत जाय मरें ॥६॥
सूर सुभट हट छांडत नाहीं,
काटो शीश लरें ॥७॥

सत्य।

नास्ति सत्य समो धर्मो न सत्यात् विद्यते परम।
नहि तीव्रतरं किञ्चित् अनृतादिह विद्यते॥

सत्य के समान कोई धर्म नहीं है और न सत्य से पर कुछ है इस लोक में झूठ के बराबर कोई तीव्र तर पाप नहीं है॥

अश्वमेध सहस्रं च सत्यं च तुलया धृतम्।
अश्वमेधसहस्राद्धि सत्य मेव विशिष्यते॥

हजारों अश्वमेध यज्ञ और सत्यको यदि तुला से तोला जावे तो अश्वमेध सहस्र से सत्य ही अधिक होगा॥

सत्यं मृदु प्रियं वाक्यं धीरो हित करं वदेत्।
आत्मोत्कर्षं तथा निन्दां परेषां परिवर्जयेत्॥

धीर पुरुष मीठी प्रिय हित कर सत्य वाणी कहे और अपनी महिमा और विद्या को अपने मुखारविन्द से दूसरों के प्रति न कहै॥

सत्यमेव व्रतं यस्य दया दीनेषु सर्वदा।
कामक्रोधौ वशे यस्य स साधुः कथ्यते बुधैः॥

जिस जन का सत्य व्यवहार, और प्रति दिन दीनों में दया, काम, क्रोध जिस के वश में हैं उसे विद्वान् साधु कहते हैं॥

ऋषयश्चैव देवाश्च सत्य मेवहि मेनिरे।
सत्यवादि हि लोकेऽस्मिन् परं गच्छति चाक्षयम्॥

ऋषि और देवता सत्य को ही सर्व श्रेष्ठ मानते थे इस लोक में सत्यवादी ही अक्षय फल को प्राप्त होता है॥

सत्य हीन वृथा पूजा सत्यहीनो वृथा जपः।
सत्यहीनं तपो व्यर्थं ऊषरे वपनं यथा॥

सत्य हीना पूजा निष्फल है और सत्य से हीन जप निष्फल है सत्य से हीनतप ऊसर भूमि में बीज बोने के समान व्यर्थ है॥

मन्यते पापकं कृत्वा न कश्चित् वेत्ति मां इति।
विदन्ति चैनं देवाश्च यश्चैवान्तर पूरुषः॥

पाप करके मानता है कि मुझ को कोई नहीं जानता है देवता और हृदयस्थ ही इस को जानते हैं

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः, सत्य वादिभिः।
अलुब्धैः दान शूरैश्च सप्तभिर्धार्यते मही॥

गौ, विप्र, वेद, सती, सत्यवादी, लोभ रहित, और दानवीर इन सातों ने पृथ्वी धारण की हुई है॥

सत्यस्य वचनं साधु न सत्यात् विद्यते परम्।
सत्येन विधृतं सर्वं सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्॥

सत्य ही श्रेष्ठ वचन है परे कोई उत्तम पदार्थ नहीं है सत्य से ही सब पृथिव्यादि धारण किये हुये हैं सत्य में ही सब लोक लोकान्तर स्थित हैं॥

एकोऽहं मस्मीति च मन्यसे त्वं,
न हृच्छयं वेत्सि मुनिं पुराणम्।

केवेदिता कर्मणो पापकस्य,
सत्यान्विकं त्वां वृजिनं करोषि ॥

मैं ही एक हूं और कोई नहीं देखता है तू ऐसा मानता है और हृदय में स्थित उस परमात्मा को न मानता हुआ पाप कर्म को जानता हुआ भी उस सर्व व्यापक परमात्मा के पास पाप कर रहा है ॥

धर्म ।

'धर्मेणैव जगत् सुरक्षित मिदं धर्मोधरा धारकः'।

सुखार्थाः सर्व भूतानां मताः सर्वाः प्रवृत्तयः ।
सुखं च न विना धर्मात् तस्मात् धर्म परो भवेत् ॥

सुख ही सब प्राणियों को सब कार्यों में प्रवृत्त कराने वाला है और धर्म के बिना सुख नहीं होता है इस वास्ते धर्म ही सर्वश्रेष्ठ है ॥

धर्मः सर्व सुखाकरो हित करो,
धर्मः बुधा श्चिन्वते ।
धर्मेणैव समाप्यते शिव सुखं,
धर्माय तस्मै नमः ।

धर्म ही सुख और हित के करने वाला है विद्वान् धर्म को ही उपार्जित करते हैं धर्म से ही कल्याण तथा सुख प्राप्त होते हैं इस लिये धर्म के लिये नमस्कार हो ॥

संक्षेपात् कथ्यते धर्मो जनाः किं विस्तरेण वः ।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥

हे मनुष्यो विस्तार से क्या संक्षेप से ही धर्म को कहता हूं परोपकार पुण्य के लिये, और पाप परपीड़न के लिये होता है ॥

न्याय युक्त जो कार्यारम्भ किया जाता है उसे धर्म कहते हैं अनाचार ही अधर्म है यह ही शिष्टों की आज्ञा है ॥

आरम्भो न्याय युक्तो यः सहि धर्म इति स्मृतः ।
अनाचारस्त्वधर्मेति ह्येतच्छिष्टानु शासनम् ॥

यज्ञ अध्ययन दान तप सत्य क्षमा इन्द्रिय निग्रह लोभ यह अष्ट प्रकार का धर्म मार्ग है ॥

इज्याध्ययनदानानि तपः सत्यं क्षमा दमः ।
अलोभ इति मार्गोऽयं धर्मस्याष्ट विधः स्मृतः ॥

जो सदैव सब का मित्र और कर्म मन वाणी से सब के हित में तत्पर है उसे ही तू धर्म जान और को नहीं ॥

सर्वेषां यः सुहृन्नित्यं सर्वेषां च हिते रतः ।
कर्मणा मनसा वाचा स धर्म वेद नेतरः ॥

कर्म मन और वाणी से सब भूतों में अद्रोह, कृपा, दान, और सत्य भाव होना ही सनातन धर्म है ॥

अद्रोह सर्व भूतेषु कर्मणा मनसा गिरा ।
अनुग्रहश्च दानं च सतां धर्मः सनातन ॥

शुद्धान्तःकरण और प्रेम दृष्टि से अवलोकन करना सुभाषित वचन बोलना और उठ कर आसन देना यह सनातन धर्म है ॥

चक्षुर्दद्यात् मनो दद्यात् वाचं दद्यात् सुभाषितम् ।

उत्थाय चासनं दद्यात् एष धर्मः सनातनः ॥

"आरम्भो न्याय" इस श्लोक से "चतुर्दद्यात्" तक के अर्थ श्लोकों के ऊपर हैं।

अहिंसा सत्यमक्रोधो दान मेतत् चतुष्टयम्।
अजातशत्रो सेवस्व धर्म एषः सनातनः ॥

अहिंसा, सत्य, अक्रोध और दान यह चार और अजात शत्रु की सेवा करना यह सनातन धर्म है।

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्य मप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयात् एष धर्मः सनातनः ॥

सत्य बोले परन्तु प्रिय बोले असत्य प्रिय कदापि न कहे और झूठी प्रिय वाणी भी न कहे यह सनातन धर्म है ॥

गृहस्थः पालयेद्दारान् विद्याभ्यासयेत् सुतान्।
गोपयेत् स्वजनान् बन्धून्नेष धर्मः सनातनः ॥

गृहस्थी स्त्रियों की रक्षा करे पुत्रों को पढ़ावे अपने बन्धु जनों की रक्षा करे यह सनातन धर्म है ॥

अकृत्यं नैव कर्तव्यं प्राणत्यागेऽप्युपस्थिते।
नत्वकृत्यं परित्याज्यं एष धर्मः सनातनः ॥

प्राण त्याग उपस्थित होने पर भी अकर्म कदापि नहीं करे और नहीं कर्म का परित्याग करे यह सनातन धर्म है ॥

दम निःश्रेयसंप्राहु वृद्धा निश्चित दर्शनः।
ब्राह्मणस्य विशेषेण दमो धर्मः सनातनः ॥

तत्त्व दर्शी महान दम को मोक्ष प्रदायक कहते हैं ब्राह्मण का विशेष रूप से दम ही सनातन धर्म है ॥

यथा पत्याश्रयो धर्मः स्त्रियां लोके सनातनः
अपवर्ग गति र्नित्यो यति धर्मः सनातनः

जैसे में स्त्रियों का सदा पति के आश्रय रहना सनातन धर्म है तैसेही स्वर्ग प्राप्ति में सनातन धर्म है।

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मानो धर्मो हतोऽवधीत्

मारा हुवा धर्म मनुष्य का हनन करता है रक्षी भूत धर्म ही मनुष्य की रक्षा करता है इसलिये धर्म नहीं छोड़ना चाहिये हत धर्म मनुष्य का हनन करता है।

सत्यादुत्पद्यते धर्मः दया दानात् विवर्द्धते
क्षमया तिष्ठते धर्मः क्रोधाद्धर्मो विनश्यति

सत्य से धर्म उत्पन्न होता है दया और दान से बढ़ता है क्षमा से धर्म स्थित रहता है क्रोध से धर्म नष्ट होता है।

अध्यापनं ब्रह्म यज्ञः पितृ यज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम् ॥

अध्ययन कराना ब्रह्म यज्ञ है, तर्पण पितृ यज्ञ है, हवन देव यज्ञ है, बलि भूत यज्ञ, अतिथी पूजन नृ यज्ञ है।

पञ्च यज्ञांस्तु यो मोहात् न करोति गृहाश्रमे।
तस्य नायं न च परोलोको भवति धर्मतः ॥

गृहस्थाश्रम में जो अज्ञानता से उपरोक्त पांच यज्ञों को नहीं करता धर्म से उसको इस लोक

तथा पर लोक की प्राप्ति नहीं होती है।

बालो वा यदि वा वृद्धो युवा वा गृह मागतः।
तस्य पूजा विधातव्या सर्वस्याभ्यागतो गुरुः॥

घर पर आया हुआ बालक वृद्ध अथवा युवा सब ही अथिति होते हैं उन की पूजा करनी योग्य है क्योंकि सबका अभ्यागत ही गुरु होता है।

उत्तमस्यापि वर्णस्य नीचोपि गृह मागतः।
पूजनीया यथा योग्य सर्वस्याभ्यागतो गुरुः॥

उत्तम वर्ण के घर में नीच भी यदि आजावे तो उसकी पूजा करना योग्य है क्योंकि आभ्यागत ही सबका गुरु है।

धर्म प्रसंगादपि ना चरन्ति।
पापं प्रयत्नेन समाचरन्ति॥
आश्चर्य मेतद्धि मनुष्य लोके॥
अमृतं परित्यज्य विषं पिबन्ति॥८

मनुष्य प्रसंग से भी धर्म का आचरण नहीं करता है किन्तु यत्न से पाप का आचरण करता है यह मनुष्य लोक में बड़ा आश्चर्य है जो अमृत को छोड़ कर विष का पान करे।८

सत्संग महात्म्य ॥

(आज़ाद भिक्षु स्वा० स्वरूपा नन्द सरस्वती)

हे तेजस्वि देव, ! हे ज्ञान तत्त्व के जानने वाले परमेश्वर ! हमें जीवन रूपी धन के लिये सत् मार्ग की ओर ले चलिये। हम लोग महात्मा जनों की शरण में रहते हुए आपके परम पवित्र चरणों का सेवन कर सकें। और कुटिल फल के देने वाले पापों को हम से बहुत दूर कीजिये, जिस से कि हम लोग अघमोद्धारिणी पतित पावनी भक्ति का प्रचार कर सकें।

स्वस्तिनः पन्था मनुचरेमः सूर्यचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददता घ्नताः जानता संगमेमहि॥

(ऋग्वेद)

हे भगवन्! हम लोग आप की कृपा से सरल सत्य निश्चित मार्ग के अनुगमन करने वाले हों। जैसे सूरज और चन्द्रमा अपने २ नियमित मार्गों पर घूमते हुए एक दूसरे को हानि न पहुंचाते हुए साथ २ संसार यात्रा को सफल तथा पूर्ण करते हैं। इसी प्रकार हम लोग भी आप के निर्दिष्ट सत् मार्ग पर चलते हुए इस मनुष्य जन्म को सफल कर सकें। प्रत्येक मनुष्य दुःखों से छूट कर सुख प्राप्त करना चाहता है। परन्तु यह नहीं विचारता कि सच्चा आनन्द किस से प्राप्त होता है। प्रत्येक मनुष्य इस

संसार सागर के अन्दर बहे डूबे जाते हैं। निकलने का उपाय सत्संग के अतिरिक्त कोई नजर नहीं आता।

नसत्संगात् परो धर्मः, न दुःसंगात् पातकं परम्।

सत्संग के अलावा जन्म मृत्यु को दूर करने वाला और सुख शान्ति प्राप्त करने वाला दूसरा कोई उपाय नज़र नहीं आता। प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन काल में यह कार्य अवश्य करने चाहियें। इन कर्मों को करने से जन्म मरण की आत्यन्तिक दुःख शीघ्र दूर हो जाता है।

सत् पुरुषों का संग करो, भगवान् में दृढ़ भक्ति करो, कर्मों के फल का त्याग करो अच्छे विद्वानों के समीप जा कर उनके चरण रज का सेवन करो। सत् पुरुषों के मुखारविंद से निकले हुए वाक्यों को श्रवण करो मनन करो पुनः निदिध्यासन करो। ओंकार रूप पर ब्रह्म के स्वरूप का सेवन करो। भगवत् चरणों में मन को लगा दो।

किं मधुना किं विधुना किं सुधिया किंच वसुधियाऽखिलयादि हृदय हरि चरित पुरुषः पुनरेति नयनयो रयनम्।

जिन सत् पुरुषों का जीवन रूपी चरित्र हृदय रूपी कालिमा को दूर करता है। उन पुरुषों के चरण रज का दर्शन होवे तो मधु विधु सुधा की क्या आवश्यकता है।

एक समय महीर्षि नारद संसार सागर में घूमते २ परम पावन भगवान् जनार्दन के परम पवित्र वैकुण्ठ लोक में पधारे। भगवान् की परिक्रमा देने के बाद बद्धांजलि हो कर प्रार्थना की।

अपार संसार समुद्र मध्ये,
संमज्जतो मे शरणं न मस्ति।
यह जीवन रूपी नौका न जाने किस जगह भंवर में फँस कर डूब जावेगी। कहीं बांस बल्ली पतवार नहीं है, हवा के सहारे बही जा रही है।

यह महा सिन्धु खारी जगत् विकारी,
न जाने कहां जाय यह नौका हमारी॥
तरंगें बड़े वेग से आरही हैं,
बहाये हुए नाव ले जारही हैं।
हजारों महादण्ड स्वच्छन्द चारी,
न जाने कहां जाय यह नौका हमारी॥
कभी उर्ध आती कभी अधः जाति,
कभी चक्कर खाती हुई है दिखाती।
दिशा चार में पूर्ण वारि हि वारि,
न जाने कहाँ जाय यह नौका हमारी॥
नहीं गांठ पैसा नहीं गांठ तोशा,
किसी मित्र का भी नहीं है भरोसा।
गई सोच ही सोच में उम्र सारी,
न जाने कहां जाय यह नौका हमारी॥
न कोसों कहीं दीखता है किनारा,
न हाथ न पैर देते सहारा।
गई देह की शक्ति है बुद्धि हारी,

न जाने कहां जाय यह नौका हमारी ॥
नदी आंसुओं की बही आरही है,
महा शोक के सिन्धु में ले जारही है ।
उठैं झाल ज्यों सिन्धु में तलवार मारी,
न जाने कहां जाय यह नौका हमारी ॥
हुईं बँद आँखें गई ज्ञान शक्ति,
नहीं यत्न कोई मिटे जो विपत्ति ।
कहां जांय कैसे बचें हे मुरारी,
न जाने कहां जाय यह नौका हमारी ॥
शरण में पड़े हैं हम तो तिहारी,
दया करके पार लगादो मुरारी ।
स्वरूपानन्द है नाथ शरण में तिहारी,
न जाने कहाँ जाय यह नौका हमारी ॥

महर्षि नारद ने अनेक विधि से प्रभु से प्रार्थना की तब ईषद् हास्य करते हुए भगवान् जनार्दन ने फरमाया, ऋषि परम भक्त नारद मुझे अपने भक्तों से कोई विषय गोपनीय नहीं है ।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योग क्षेमं वहाम्यहम्

जो मेरे परम भक्त और किसी विषय में चित्त को न लगाते हुए अहर्निश मेरा भजन पूजन मनन निदिध्यासन करते हैं ऐसे भक्तों के पीछे मैं स्वयं लगा हुआ फिरा करता हूँ । ताकि मेरे भक्त को किसी प्रकार का कष्ट न होने पावे । परन्तु हे नारद ! मेरा यह परम सिद्धान्त है ।

मम भक्ता हि हे नारद नमे भक्तास्तु मे मता ।
मद्भक्तस्यतु ये भक्तास्ते मे भक्ततमामता ॥

हे नारद जो मेरे भक्त कहलाते हैं, वे वास्तव में मेरे भक्त नहीं । बल्कि जो मेरे भक्तों के भक्त हैं, वे मेरे प्यारे हैं परन्तु यह मेरी परम प्यारी भक्ति किस से प्राप्त होती है, आप जैसे परम भक्त, परोपकारी, परदुःख दुःखी, लोकों के सन्ताप को हरने वाले, मद्भक्ति परायण, जितेन्द्रिय, जितक्रोध, स्थितप्रज्ञ सर्वदा सन्तोष रूपी अमृत से तृप्त होने वाले, मुक्तानन्द, प्रशान्त चित्त, कर्मफल त्यागी इत्यादि विशेषणों से विभूषित परम भक्तोंके दर्शनमात्र से पामर से पामर मनुष्य भी संसार सागर से पार हो जाता है, हे नारद !

बहवः गुरवः सन्ति शिष्य वित्तापहारकाः ।
दुर्लभस्तु गुरु एकैव शिष्यसन्तापहारकः ॥

संसारमें शिष्यों को बहलाकर धन उड़ाने वाले और अपनी सेवा कराने वाले लोभी गुरु बहुत मिलते हैं परन्तु अपने भक्तोंके तथा शरणागत शिष्यों के दुःखों को दूर करने वाले विरले ही गुरु मिलते हैं

सच्चा सद्गुरु मिले तो चेला,
पलट के कीड़े से भृङ्ग होकर ।
समया अपने में आप फिर मैं,
मिलाले जलकी तरंग होकर ।

यह निस्सन्देह बात है मेरे परम प्यारे भक्तो

मैं तथा मेरे अन्दर किंचित् मात्रभी भेद नहीं है

नारद मुनि मेरे सन्तों से अन्तर नाहीं ।
सन्त चलें पीछे उठ चालूं ऐसे सन्तन कीआशा
जहाँमेरे साधु भजन करें हैं, वहीं हमारा बासा

ऐसे सत् पुरुषों के समागम से बढ़ कर संसार में और क्या सुख हो सकता है

गङ्गा पापं शशितापं कुबेरं दैन्यमेवच ।
पापंतापंच दैन्यंच हरेत् साधुसमागमः ॥

गङ्गा जी में स्नान करने से अज्ञात अवस्था में होने वाले पाप विनाश हो जाते हैं। और चन्द्रमा के प्रकाश में बैठने से सूर्य की गरमी से व्याकुल हुए मनुष्य को शान्ति प्राप्त होती है, और कुबेर की उपासना करने से दरिद्रता दूर हो जाती है, तीन देवताओं की भिन्न २ उपासना करने से जो तीन फलों की प्राप्ति बतलाई है, वे तीनों फल महात्मा लोगों के समागम से स्वयं ही प्राप्त हो जाते हैं। हे भक्त नारद !:—

भावपात्र में अर्प कर सुन्दर जीवन फूल ।
सद्गुरु केअर्पण करो यही ज्ञान का मूल, ॥

विश्वास रूपी पात्र में सुन्दर जीवनरूपी फूल को सत् गुरुके अर्पण कर देना चाहिये, क्योंकि जबतक आशा रूपी फांसी में जीव बन्धा रहता है, तब तक ज्ञान कभी प्राप्त नहीं होता। "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" और। ज्ञान के बगैर कोटि जन्मों में भी मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। "पुनरपि जननं पुनरपि मरणं" के अनादि चक्र में यह जीवात्मा घूमता ही रहता है। हे नारद! यदि संसार सागर के पार होना चाहते हो, तो सत्संग करो सत् संगरूपी नौकामें बैठकर भव सागर के पार हो जाओ।

जब ईशन राम दे तब २ मांगो सत्संग,
चाहो पदवी भक्त की, चढे जो नवधा रँग ।
रवि को तेज घटे नहीं, ज्यों घन जुड़े घमण्ड ।
साधु वचन पलटे नहीं, पलट जाय ब्रह्मण्ड ।
सुन्दर मानुष देह की महिमा बरणें साध ।
जामें बस के पाइये पूरण ब्रह्म अगाध ।

एक पुरानी कहानी ।

असहयोग, आन्दोलन जोरों पर है देश में महात्मा गान्धी की तूती बोल रही है। मौलाना महम्मद अली और शौकत अली देवता माने जाते हैं, शहर और कसबे मौलानाओं की जयकारों से गूंज रहे हैं। दोनों भाई महात्मा जी के दाएं और बाएँ हाथ समझे जाते हैं असहयोग और खिलाफत की देश में धूम मच रही है। भारत के पन्चाई दीवाने हिन्दू और मुसलमानों के मिलाप से अंगरेजी सर्कार चक्कर में है और संसार चकित है। संसार के नीतिज्ञ आश्चर्यान्वित हैं वह आशा की झलक से उत्साहित होकर सोचते हैं कि क्या ३२ करोड़ मनुष्य अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता फिर प्राप्त कर सकेंगे, समस्त संसार में स्वतंत्रता के

पुजारी महात्मा गांधी को जानने और देखने के बड़े उत्सुक हैं। वह कहते सुनाई देते हैं कि बिना शस्त्र के अंगरेजी सर्कार की अवज्ञा करने वाला यह महान् पुरुष कौन है? कुत्ते और बिल्ली की भान्ति लड़ने वाले हिन्दू और मुसलमानों को भाई २ की तरह दूध, पानी करने वाला वह विलक्षण पुरुष कैसा करामाती है? बुद्ध और ईसा की भान्ति अहिंसा व्रत का पालन करने वाला यह दिव्य महापुरुष कौन है? अंगरेजी सर्कार सोचती है कि जर्मन की लड़ाई कठिन होते हुए भी हमने जीतली परन्तु यह मरा सांप गले में से किस प्रकार निकाला जावे सेना को परास्त करना कठिन नहीं परन्तु ३२ करोड़ निरस्त्र जन समूह की बाढ़ को जो पतंगे की भान्ति जलने को तय्यार हो किस तरह शान्त किया जाय। इस बिना मार काट की लड़ाई का हमको अभ्यास नहीं है। हमारी वीरता और राजनीति दिखाने का अवसर नहीं है, इस लंगोट बन्द ने तो हमारी राजनीति और सभ्यता दोनों की परीक्षा कर डाली। इस परीक्षा में पास होना बड़ा दुस्तर है। लण्डन की पार्लिमेण्ट और केबीनट दोनों में खूब सोच विचार होता है। इंगलेण्ड में भारत के वायसराय पद को पेश किया जाता है परन्तु ऐसी परिस्थिति में उसको स्वीकार करने का किसी का साहस नहीं होता। इंगलेन्ड के भाग्य में अभी बड़ा बल है एक विचक्षण राजनीतिज्ञ यहूदी लार्ड रीडिङ्ग जिसने अमेरिका की कठिन समस्या को हल किया था अपनी बुद्धि पर भरोसा करके भारत की दशा को सुधारने का बीड़ा उठाकर आता है। भगवान उसकी सहायता करते हैं और वह अपने कार्य में दत्त चित्त होजाता है।

सबसे पहला काम जो लार्ड रीडिङ्ग करता है वह प्रिन्स आफ वेल्स का भारत में बुलाना था। सन् १९२१ का आरम्भ काल है। प्रिन्स आफ वेल्स भारत में आते हैं महात्मा गान्धी उनके स्वागत में भाग लेने की मनाई कर देते हैं। प्रिन्स का दिल्ली में आना निश्चय होता है। भारत सर्कार को चिन्ता होती है कि प्रिन्स के मन पर यह प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए कि उनका स्वागत अच्छा नहीं हुआ। यद्यपि महात्मा गान्धी का बड़ा प्रभाव था परन्तु फिर भी एक जमी हुई सर्कार का बड़ा प्रभुत्व होता है। दिल्ली के हिन्दू मुसलमानों में बड़ा जोश था उन्होंने मेल करके पूरा असहयोग किया। हड़ताल करदी परन्तु सर्कार ने आस पास के ज़िलों से कलक्टरों द्वारा ग्रामों से लोगों को बुलाने का प्रबन्ध कर लिया। निकटवर्ती ज़िलों से सैंकड़ों स्पेशल गाड़ियाँ छोड़ी गईं और दिल्ली में लाखों आदमी स्वागत के लिए इकट्ठे होगए यद्यपि ग्राम में आन्दोलन इतना तीव्र न था जितना कि शहरों और क़सबों में परन्तु फिर भी आन्दोलन बहुत था और विशेष बात यह थी कि सर्कार का जनता पर से विश्वास

हटगया था इस लिए सर्कार ने बड़ी चतुराई से अछूतों को अपनाने का प्रयत्न किया। दिल्ली में अछूत जातियों की एक सभा करने का आयोजन किया गया। बिना किराए की गाड़ियां तो थी ही इसके अतिरिक्त उनको और भी सब प्रकार की सहायता दी गई। फीरोजशाह तुगलक का किला सभा करने और ठैरने का स्थान नियत किया गया। सर्कारी अफसरों के अतिरिक्त इस कर्म में मिशन के पादरियों का पूरा हाथ था। अंगरेजी पादरी और वह लोग जो अछूतों में से ईसाई होगए थे इसमें सभी सम्मिलित थे। मिशन वालों को जहां उनसे सहानुभूति थी वहां उनका यह भी लक्ष, और प्रयत्न था कि इनमें ईसाईयत का प्रचार किया जावे।

आश्रम का और दिल्ली का विशेष अन्तर नहीं है इसलिए आश्रम में भी यह समाचार मिला कि दिल्ली में पचास हजार से अधिक अछूत इकट्ठे हुए हैं और पादरी लोग इनमें ईसाई धर्म्म का प्रचार करेंगे। आश्रम में अछूतों की पाठशाला और अछूतों से बड़ा प्रेम है। श्री १०८ महाराज जी ने हम लोगों को बुलाकर फरमाया कि हिन्दू मुसलमान प्रिन्स के स्वागत में भाग न लेने के कारण अछूतों से नाराज़ हैं वह उनमें प्रचार करने नहीं जावेंगे और ईसाइयों को वहां प्रचार करने का अवसर है इसलिए वहां जाकर उनमें प्रचार करना चाहिए क्योंकि ऐसा न किया जावेगा तो सम्भव है हजारों हिन्दू एक दम ईसाई हो जावें। अछूतों से भी प्रेम था और श्री महाराज जी की आज्ञा भी शिरोधार्य करनी चाहिये परन्तु फिर भी हम विकट समस्या में पड़गए। कारण मन का वेग बड़ा प्रबल है उस समय की परिस्थिति को अनुभव करके भान्ति २ के विचार उत्पन्न होने लगे। मानसिक वृत्तियां नाचने लगीं मान अपमान का भूत भयभीत करने लगा सोचने लगे-कि जो आश्रम त्याग, वैराग के विचार से अपने ढंग का एक ही है जिसकी सादगी भारत के सब आश्रमों से बढ़ी हुई है जिससे लोगों को यह आशा है कि यह धर्म्म का काम करेंगे वही आदमी आज न मालूम किस लालच वश समस्त देश के विचारों के विरुद्ध प्रिन्स के स्वागत में शामिल होने के लिए आरहे हैं। इससे भी बढ़कर बात यह हुई कि श्री महाराज जी ने फरमाया कि जो सर्कारी गाड़ी रेवाड़ी से जावेगी उसी में जाना चाहिए। पहले तो हम मन को मार कर रह गए परन्तु फिर न रहा गया और हम बोल ही उठे "क्या महाराज जी इसी गाड़ी में जाना चाहिए" श्री महाराज जी ने सरलता से फरमाया "हाँ इसमें आश्रम का किराया भी खर्च न होगा,, बात स्पष्ट हो चुकी थी हम मन को मसोस कर रह गये और चलने का संकल्प करके तय्यारी करने लगे। वानप्रस्थी, सन्यासी और अध्यापक लड़कों को लेकर स्टेशन पर पहुंचे। वहां असहयोगी सज्जन मिले जो गाड़ी में जाने वाले लोगों से न जाने की प्रार्थना कर रहे थे। हम लोगों को

देखकर वह चकित रह गए और प्रश्न करने लगे कि आप लोग कहां जारहे हैं? यद्यपि अज्ञान के कारण हमको अपने कार्य के परिणाम का कुछ भी पता न था तो भी श्रद्धा के कारण हमारा निश्चय दृढ़ था और हमको किसी प्रकार का संकोच, लज्जा व शंका न थी। हमने प्रेम से उत्तर दिया कि अछूतों में प्रचार करने जा रहे हैं। उन्होंने हमारी बात का विश्वास नहीं किया वरन भी हंस कर चुप होरहे उनकेमन हमारे जाने से खिन्न तो बहुत हुए परन्तु क्या करते हम भी अपने विश्वास में मगन थे। हां एक व्यक्ति वहां ऐसे भी थे जो हमको देखकर प्रसन्न हुए और वह थे रेवाड़ी के तहसीलदार। (अपूर्ण)

शेष फिर ६५ पृ १८

(सम्पादक)

समाचार।

एक अङ्गरेज वैज्ञानिकने एक ऐसी कल बनायी है जिसकी सहायता से मनुष्य मुंहके बजाय हाथों से बात चीत कर सकता है। लन्दन में एक जगह इसकी परीक्षा हुई और वहां हाथों से शब्द उच्चारण कराये गये।

तोपके गोलोंकी तसवीर उतारनेके लिये एक केमरा बना है जो एक सेकण्ड में पांच हजार तसवीरें उतार लेता है। इसपर सवा दो लाख रुपये की लागत लगी है और चार साल में बनकर तैयार हुआ है।

(स्वदेश)

हुगली जिलान्तर्गत हककपुरसे समाचार आया है कि अनेक रंगों से रंगी हुई एक एक लड़कीका वहां जन्म हुआ है। इस बात को सुनकर बहुत लोग उस बालिका को देखने के लिये एकत्रित हो गये। कहा जाता है कि बालिका और उसकी जननी दोनों ही अच्छी तरह हैं।

समालोचना।

ज्योतिष-समाचार—यह रेवाड़ी से प्रति मास निकलता है। पं० प्रहलाददत्त शर्म्मा इस के सम्पादक हैं। इस में ग्रहराशियों का फल रहता है। ज्योतिष पर विश्वास रखने वाले इस से लाभ उठा सकते हैं। वार्षिक मूल्य १) रुपया। "तेजी मन्दी प्रकाश" के ग्राहकों को ॥≤) में मिलता है।

तेजी मन्दी प्रकाश।

यह पुस्तक १८ वर्ष से निकलती है। ज्योतिष पर विश्वास करने वाले व्यापारियों के काम की चीज़ है। पं० जी का परिश्रम सराहनीय है।

पता:—

पं० प्रहलाद दत्त शर्मा ज्योतिषी,

रेवाड़ी।

निम्न लिखित महानुभावों ने भक्ति के संरक्षक बन कर भक्ति को अपनाने की कृपा की है।

१. राव बहादुर लेफ्टेनेन्ट राव बलवीर जी ओ. बी. ई. रामपुरा	५१)
२. राव श्रीराम रईस नांगल	२५)
३. म० शोभाराम जी डूंगरवास	२५)
४. चौ० धर्मसिंह जी नायब तहसीलदार रेवाड़ी	२५)

भजन।

आश्रम के गाऊं गीत सुनलो (सुनो तुम) नर नारी ॥ टेक ॥
है राम सरोवर तीरथ भाई, मिट्टी खोदें लोग लुगाई।
हिन्दू मुसलमान और ईसाई, सब तीरथ के भये सहाई ॥
है आश्रम के बीच शोभा अति भारी ॥ १ ॥
चहं ओर हैं तरुवर लागे, पीपल अर्जुन आम विराजे।
शीशम कदम्ब आंवला लागे, भोर होत ही पक्षी जागे ॥
मिल गावें संगीत उठे हैं ब्रह्मचारी ॥२ ॥
गुरुकुल चल्यो यहां पर भाई, दूर दूर से कन्या आई।
विद्या पढ़ती चित्त लगाई, देश उन्नति होय सवाई ॥
दूर्वे अविद्या भीत होगा सुख भाई ॥ ३ ॥
दलितोद्धार पाठशाला है, एक समीप औषधाला है।
इस का काम बड़ा आला है, साथ ही एक पुस्तकाला है ॥
है यह सब का मीत पत्र "भक्ति" जारी ॥ ४ ॥
उत्तम एक गौशाला है, ठैरन को अतिथी शाला है।
भक्ति प्रेस खुला आला है, भक्तों ने देखा भाला है ॥
जिन की प्रभु से प्रीत धर्म पर बलिहारी ॥ ५ ॥
निष्काम कर्म सब करते हैं, वृक्षों में पानी भरते हैं।
ध्यान प्रभु का धरते हैं, नहीं किसी से डरते हैं ॥
यही जो उनकी रीत वेद पढ़ें ब्रह्मचारी ॥ ६ ॥
शंकर काम करै है भारी, नारायण गौ शाला सुधारी।
दिल सुख गावे भजन मुरारी, भूमानन्द कहै ब्रह्मचारी ॥
करो शम्भु से प्रीत हरैं संकट भारी ॥ ७ ॥

विना गुरु के सिद्धान्त कौमुदी।

भाषाफक्किका प्रकाश।

इस पुस्तक में बहुत ही सरल भाषा में तथा प्रश्नोत्तर के रूप में सिद्धान्त कौमुदी की गूढ फक्किओं को समझाया है। विद्यार्थियों के बड़े लाभ की पुस्तक है इससे विद्यार्थी लघु पढ़कर स्वयं सिद्धान्त कौमुदी पढ़ सकता है। मूल्य केवल ॥)

ज्ञान धर्मोपदेश।

इस छोटी सी पुस्तक में वेद शास्त्र तथा धर्म का सार संगृहीत है और वेदान्त की उत्तम कविताओं का संगृह है। मूल्य ≈)॥

शब्द सदाचार संग्रह।

इस में कवीर सूरदास आदि माहात्माओं की वाणियों का संगृह है। मूल्य ≈)।

वेदोपनिषद्।

इस पुस्तक में ईश, कठ, मुण्डक, और माण्डूक्यादि उपनिषदों तथा वेदों के उत्तम २ मन्त्रों का अर्थ सहित संगृह है। मूल्य ।≈)

अष्टोत्तरशत मन्त्रमाला।

इस पुस्तक में गीता और उपनिषदों से १०८ बहुत ही उत्तम श्लोकों का संगृह है। यह नित्य पाठ करने की पुस्तक है। मूल्य ≈)॥

भगवद्गीता का संस्कृत तथा भाषा टीका छप रहा है। मूल्य ॥≈)

मैनेजर भक्ति प्रेस

भगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी)

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" आश्रम रामपुरा रेवाड़ी।